

नागर गीता

१९६५ '६६ म रचित

वचन की अन्य रचनाएँ

- १ मरुत द्वीप का स्वर (दरुत की वविताओं का अनुवाक) '६५
- २ दो चट्टानें '६५
- ३ चामठ रुमा कविताएँ (अनुवाक) '६४
- ४ चार मम चामठ सृष्टे '६२
- ५ नग पुरान भरोगे (निवध-मद्यह) '६२
- ६ त्रिभगिना ६१
- ७ कविता मं सौम्य रुत (न वाच्य ममवा) ६०
- ८ आधो गो (अनुवाक) ५६
- ९ युद्ध और नाचर ५८
- १० आरना और भंगार '५८
- ११ घर के स्वर उर '५७
- १२ मिलन यमिनी '५
- १३ मूल की माता ६८
- १४ हवाइव '४६
- १५ आनुल भंगर ६३
- १६ निरा निः शय ३८
- १७ मधुशाला ३६
- १८ रीयान का मधुशाला (अनुवाक) '३५
- १९ उमर रीयान का स्वादा (अनुवाक) ५६
- २० मरा हार (प्रारंभिक रचनाएँ मं सम्मिलित) ३२
- २१ प्रारंभिक रचनाएँ—पहला भाग } कविता ४३
- २२ प्रारंभिक रचनाएँ—दूसरा भाग }
- २३ प्रारंभिक रचनाएँ—तीसरा भाग—कविता ४६
- २४ बचपन का मधुशाला भर (मन्त्र) ३४
- २५ मन्त्र (मन्त्र) ५३
- २६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- २७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- २८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- २९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३१ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३२ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३३ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३४ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३५ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ३९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४१ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४२ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४३ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४४ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४५ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ४९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५१ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५२ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५३ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५४ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५५ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ५९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६१ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६२ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६३ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६४ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६५ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ६९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७१ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७२ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७३ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७४ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७५ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ७९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८१ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८२ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८३ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८४ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८५ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ८९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९१ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९२ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९३ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९४ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९५ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९६ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९७ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९८ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- ९९ अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४
- १०० अन्तिम सोपान (मन्त्र) ६४

नागर गीता

स्वातन्त्र्य
व्यञ्जन

राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली

© डा० हरिवंश राय बच्चन, १९६६

पहला सम्पदन जून १९६६

३०४०

मूल्य	छ. रुपये
प्रकाशक	राजगान्धारी प्रकाशक बन्धुमाला प्र. नि. ६
मन्त्र	हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस कम्पनी रोड लि. ६

NAGAR GITA BACHCHAN TRANSLATION

000



मर मामा जा
 स्वर्गोप श्री विष्णेश्वरी प्रसाद की
 पुण्य स्मृति म
 श्राद्ध-स्वरूप

© डा० हरिवंश राय बच्चन १९६६

पहला संस्करण जून १९६६

मूल्य

प्रकाशक

मन्त्र

छ रुपये

राजपाल एण्ड सन्स नईमोरी गेट नं० ६

हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस नवीन रोड दिल्ली-६

NAGAR GITA BACHCHAN TRANSLATION

6 00



भर मामा जा
स्वर्गाय श्री विष्णेश्वरी प्रसाद की
पुण्य स्मृति म
धादन्वन्ध

सम्बोधन

अपने नाम से एक और कृति आज आरंभ हो रही है। म रखत हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

यह एक तरह से गीता का अनुवाद है।

गीता भारत के जीवन में इतना अनिवार्य रूप से मगढ़ है कि उस किसी भी अभिनव रूप में उपस्थित करने के लिए किसी क्षमा माचना की आवश्यकता नहीं। आदि गुरुआचार्य से विनाश भाव तक भारत का सर्वोच्च मनापात्र ने उसका गुणानुवाद किया है। अतः अथवा अपमान का उस्ताद के महागान में, मुनन मुनन अपना भी कोई मुर छड़ दना एक ऐसा कमजोरी है जिसे समझा जा सकता है। इसी प्रवृत्ति के अंगहरण-स्वरूप इस अनुवाद को समझा जाए।

इस दशक के इसके पूर्व किए गए गीता के मेरे एक अन्य अनुवाद की याद आरंभो आना स्वाभाविक है। उस अनुवाद की मैंने जन गीता कहा था इस अनुवाद की मैंने नागर गीता कहा है। वह अवधी भाषा में किया गया था यह गहरी बोली में है। वह भाषा के समय सिद्ध छनौ में था—मोहा, सारंग चौधरी छ म , यह सही बोली गद्य का एक प्रयोगात्मक लय में बद्ध है—प्रयोगात्मक हारर भा सहज त्रि में हिन्दी का आधारभूत लय मानता हूँ जो आमबिक पेंटामीटर की अग्रजो पद्य गद्य बोली की मोटे तौर से आधारभूत लय। यह सिद्ध करने के लिए तब प्रस्तुत करने का यह स्थान नहीं। किसी नाम विनाश के अभाव में आप चाह तो गीता के सम्म को ध्यान में रखते हुए इस नारायण नर अथवा हृण धनजय लय कह सकते हैं जिसका अनुसरण कर पूरी नागर गीता बनता है। जन गीता में मैंने अपने को गीता का प्रतिस्वनिवार कहा था इसमें मैं अपने को स्नातकराज कह रहा हूँ। उसके आशुग का मैंने मगनाचरण कहा था , इसकी सम्बाधन कह रहा हूँ—सम्बाधन का अर्थ सम्बोधित करने तक शामिल नहीं।

यह सब ज़तर अनायास ही नहीं है। कुछ विनोद बातें मेरे अतमन म रही हैं जिन्होंने मुझसे ऐसा कराया है। उन्हें आप चाहें तो ध्येय की सना भी दे सकते हैं। जो मेरा ध्येय हो वह पूरा भी हो यह आवश्यक नहीं है। जो पूरा हो उतना ही मरा ध्येय ठीक था ऐसा मैं मानना चाहूँगा। ध्येय के पूरा अथवा अपूरा होने में अपना समय लगता है। वह समय मेरी जीवन सीमा के बाहर भी हो सकता है अदर भा। समय का स्थायी निणय प्रायः मद होता है। तब अभी से उसकी परि कल्पना कर यदि मैं उसकी काक्षा करूँ या उससे विद्वेय तो मेरी मूर्तता होगी। मेरे वनमान और भविष्य के—यदि रहे तो—पाठको के लिए तथ्य और कल्पना—दोनों इस सबध में सहायक सिद्ध हो सकेंगी इसलिए यह काय उही पर।

फिर भी एक मोटी बात की ओर संकेत करना मैं समझना हूँ अनुचित न होगा। जो मेरे दोनों अनवादों को यथेष्ट सहानुभूति से पढ़ेंगे उनको स्वयं ऐसा आभास होगा।

गीता किसी जड़ पुस्तक का नाम नहीं है। कुछ नाग गायद उसे अमर पुस्तक कहना चाहे। सजीव अथवा सप्राण पुस्तक कहकर कुछ लोगों को सताप हो सकता है। मेरे लिए और गायद बहुतों के लिए गीता पुस्तक है ही नहीं। वह जीवित जाग्रत व्यक्ति है जसे अपना कोई सगी-साथी और उसका अपना भाव और विचार जगत है जसे किसी व्यक्ति का हृदय और मस्तिष्क होता है। जन गीता में मैंने उसके हृदय के कुछ तारों को झटका करने का दुःसाहस किया था। नागर गीता में मैंने उसके मस्तिष्क की कुछ गिराओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। सफलता असफलता की बात सोचने की गीता मनाही करती है। कम से कम इन कृतियों के सबध में तो ऐसा ही सोचूँ। स्वात सुखाय अथवा स्वात स्तम गातये भी मैंने इन कृतियों को प्रस्तुत किया हो तो मैंने कुछ अनुचित नहीं किया। मुझ साधारण का स्व ऐसा नहीं हो सकता कि किसी भी पर से मेन न छाए। फिर भी आपके स्वागत उपेक्षा—दोनों के लिए मैं तयार हूँ यानी दोनों के प्रति उदासीन।

जन और नागर गीतों के समाज पक्ष की ओर भी आपका ध्यान जाना स्वाभाविक है। ग्राम और नगरों में बटा यह महान्ग क्या हृदय और बुद्धि में ही बटा नहीं है? शायद मेरी अवचेतना ने संकारण ही जनगण और नागरिका के लिए दो विभिन्न माध्यमों से एक ही कृति प्रस्तुत की है। बुद्धि और हृदय का ऐसा विभाजन स्वस्थ और हितकर नहीं। स्वस्थ और हितकर तो यह होगा कि नागरिकों के पास ग्रामीणों का बाढा हृदय आए ग्रामीणों के पास नागरिकों की थोड़ी बुद्धि जाए। प्रतीक रूप से जन गीता नगरों में भी प्रतिध्वनित हो नागर गीता

व दान ग्रामा म भी हा । हृदय और बुद्धि मे सतुलन रखना गीता व समत्व योग के अंतगत ही आया ।

भावो को उद्बलित और विचार को उदबुद्ध करने के लिए ध्वनि और रूप ज्योति के माध्यम प्रमग अधिक उपयुक्त समझ गए है । दोनों को एक साथ देखने सुनेवाले को सो-ल्यूमिनेग (साउंड ल्यूमिनेशन) की सी अनुभूति हो सकती है । अधिकारी पाठका को ऐसी अनुभूति कराने म ये कृतियां वहाँ तक सक्षम हो सकती है । यह कहना मेरे लिए कठिन है । सजन करव सजन का काम समाप्त हो जाता है कृतियां बाद को यथावकित-सामय्य अपना दायित्व सभालें । अनुवाद को सजन में पहली बार नहीं कह रहा हू ।

नागर गीता के मुखरित होने मे प्रेरणा उ ही बाळमीनी स्वामी जी महा राज की रही है जिनकी प्रेरणा स जन गीता रखाकित हुई थी ।

जन गीता के तीसरे संस्करण की अंतिम रूप स सगाधित और परिष्कृत कराने के लिए अक्टूबर ६४ मे जब उन्होंने मुझे अपने पास बलाया तो उन्होंने सकेत किया कि जन गीता का अनुवाद खड़ी बोली गद्य म भी किया जाना चाहिए । यद्यपि यह काम वे मुझसे कराना नहीं चाहत थ फिर भी उनकी अनिच्छावत् किसी इच्छा की पूर्ति मे मैं निमित्त बन सकू तो मुझ सतोष होता है । मैंने सोचा यह काम मैं ही करूंगा । बाद की मुझ ध्यान आया कि मैं अनुवाद का अनुवाद क्या करूँ । सीधे गीता स ही खड़ी बोली म अनुवाद क्या न करूँ । थोच म मेरे बचि मन ने उसे लयबद्ध गद्य म प्रस्तुत करन का भार लिया । खड़ी बोली म गीता के अनेक अनुवाद हैं । विचार विनयन को लयबद्ध रखकर गीता की बाणी को खड़ी बोली में भी एक विगप गौरव गरिमा दी जा सकती है । कम से कम उसे देने का प्रयास किया जा सकता है । नागर गीता वही प्रयास है ।

२६ जनवरी १९६६ को बसत के दिन मैं नागर गीता की पाठ्यलिपि स्वामी जी महाराज के घरणा में रखी । उनके कुछ अंग न उहा व मानिष्य म अंतिम रूप ग्रहण किया । उनकी प्रतिक्रिया से किसी का प्रभावित करन की बात मेरे मन म नहा । मुझ इतना ही कहना है—प्रणामन का गंगावती म—कि उनस किनारेस प्राप्त कर ही यह आपका सामन रखी जा रही है ।

कृतज्ञता आपन किसी भी कम-यग का धाति-पाठ है या होना चाहिए । गीता का समनन म मैं जिन घवा की सहायता सता रहा हूँ उनका नाम गिना जपन स्वाध्याय की व्यापकता प्रदर्शित करना नहा चाहता । बाबा तुलसीदास का एक दोर की यात्रा आ गई है । उससे अधिक उपयुक्त गंगा म उनका प्रति कृतज्ञता गाथा नहीं की जा सकती ।

प्रति अपार जे सरितवर जौ नृप सेतु कराहि,
चलि पिपीलिकउ परम सधु बिनु अम पारहि जाहि ।

पर गीता प्रथा स पूणतया समझने की वस्तु नहीं । उसके लिए तो किसी ऐसे सिद्ध के संपर्क की आवश्यकता है जो गीता स्वरूप हो । वह साधन से अधिक सोभाग्य से मिलता है— सो सब साधन त नहि होई । काष्ठमोनी स्वामी जी का दर्शन मरा बड़ा सोभाग्य है । उनका संपर्क म आकर भी जन गीता और नागर गीता में भ्रुष्टिया रह जाण तो यही समझना चाहिए कि फूल फर न बैठे जदपि सुधा बरिमाहि जलन । उनका प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए मरे पास शब्द नहा नमन है । मैं उनको मन नमन करता हूँ यह उ हं पहुंचता भी है । तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय काय मैं डम नागर गीता यज्ञ का गति पाठ करता हूँ ।

काष्ठमोनी स्वामी जी महाराज से बिलयरेंस प्राप्त करने में श्री चिम्मन लाल गोस्वामी और श्री निवनाथ दुन में मुझे जो सहायता प्राप्त हुई है उसने लिए उनके प्रति भी नतमस्तक हूँ ।

और अंत में स्वस्ति वाचन के रूप में—जसे जन गीता स मैंने आपके लिए आनंद की वसे नागर गीता से आपके लिए जागति की कामना करता हूँ । वससे अपन जीवन पथ के लिए आपको कोई क्षीण ज्यादा भी प्राप्त हुई तो उसमें मैं अपना ही जीवन पथ प्रकाशमान मानूंगा ।

१३ बिलिंगडन क्रिमें

नई दिल्ली-११

अप्रैल ६६

—बकचन

क्रम

अध्याय	विषय	पृष्ठ
पहला	अजु न विपाद योग	१५
दूसरा	साध्य योग	२५
तीसरा	कर्म योग	४३
चौथा	ज्ञान-कर्म सत्यास योग	५४
पाँचवाँ	कर्म सत्यास योग	६४
छठा	जात्ममयम योग	७१
सातवाँ	ज्ञान विज्ञान याग	८२
आठवाँ	अक्षर ब्रह्म योग	८६
नवाँ	राजविद्या राजगुह्य योग	१०४
दसवाँ	विभूति योग	११३
ग्यारहवाँ	विश्वरूप ज्ञान योग	१२६
बारहवाँ	भक्ति योग	१४०
त्रहरहवाँ	शत्रु शत्रु विभाग योग	१४६
चौदहवाँ	गुणत्रय विभाग याग	१४७
पंद्रहवाँ	पुरुषोत्तम योग	१४८
सोलहवाँ	दशमुर गणविभाग याग	१४८
सत्रहवाँ	ध्यानत्रय विभाग याग	१४८
अगारहवाँ	माण मन्त्र याग	१६४

नागर गीता

पहला अध्याय

सजय से घतराष्ट्र न कहा १
घमक्षत्र म कुरक्षत्र म
समरेच्छा से हुए इकट्ठ
मेरे और पांडुपुत्रा ने
जा कुछ किया
बताओ, सजय ।

सजय बाल, २
"यूहयद्ध पांडव-सना वो
राजा दुर्योधन न देता,
फिर आचार्य द्रोण के सम्मुख जाकर
उनसे ऐसा वान,

'ह आचार्य, ३
पांडुपुत्रा का
"स महती सना का दर्जे
इस
जापर गिप्य
द्रुप" व पुत्र मुषी न
यूहयद्ध तर गटा किया है ।

नागर गीता

४ इसम
समरागण म अजुन भीम सरीखे
महा धनुधर शूरवीर हैं—
सात्यकि ह
विराट है,
राजा द्रुपद रयात जा महारथी हैं ।

५ धष्टवत्सु औ चक्षितान है,
वीरवान कापीपति
पुरुजित कृतिभाज हैं
और गाय ह जो गरुगव

६ औ पराक्रमी युधामन्यु है
और उत्तमोजा बलशाली,
और वीर अभिमन्यु
पच सुन द्रुपद सुता के—
ये सारे ही महारथी है ।

७ अपने दल म भी विशिष्ट जो उन्हें
द्विजोत्तम
आप जान लें
अपनी सेना के जा नायक है,
अब उनके नाम
आपका बतलाता हू ।

८ आप स्वयं ह
भीष्म कण ह
समरविजेता कृपाचाय है

अस्वत्यामा हैं,
विकण है,
सोमदत्त-सुत—भूरिथवा—हैं ।

विविध अस्त्र शस्त्रों से सज्जित ६
और बहुत से शूरवीर हैं—
युद्ध विशारद,
सब मेरे हित
प्राण हथेली पर रखते हैं ।

भीष्म सुरक्षित १०
सबल हमारी सेना
दुजय सब प्रकार है
और भीम रक्षित
इनकी यह सारी सेना
सुगम जेय है ।

आप लोग सब ११
अपने-अपने सभी मोर्चों पर
अविचल रह
भीष्म पितामह की ही रक्षा में
तत्पर हों ।

इसपर १२
वीरव-युद्ध प्रतापी भीष्म पितामह न
गजन वर सिंहनाद सम
उच्चस्वर से दास बजाया,
दुर्योधन के अतस्तन में हथ जगाया ।

- १३ एक साथ फिर
गख, भेरिया
ढाल, मदग नर्सिह बज उठे,
शब्द तुमुल ज्वर म छाया ।
- १४ तव सफद घाड़ो के
उत्तम रथ म बठ
वृष्ण और अजु न न अपन
दिय रूप स्वर गख बजाए ।
- १५ हृषीकेश न पाचजय को,
गुडाकेश न देवदत्त का
और वकोदर, भीमकर्म न
पौंड नाम के महाशख को
किया निनादित
- १६ कुती पुन युधिष्ठिर न
जा शय बजाया
उसका नाम अनतविजय है
नकुल और सहदेव सहोदर ने जो
वे सुघोष मणिपुष्पक
बहलाते है ।
- १७-१८ श्रेष्ठ धनुधर वाशिराज न
गूर शिखड़ी महारथी ने,
घट्टलुम्न राजा विराट ने
अपराजित सात्यकि ने,
औ नरपाल द्रुपद ने,

और द्रौपदी के पुत्रों ने
महाबाहु अभिमन्यु बली न,
हे पृथिवीपति — सज लोगो न
अपन अपने शस्त्र बजाए ।

उन शस्त्रों के १६
तुमुल घोष ने
पृथ्वी नभ शब्दायमान कर
महाराज के पुत्रों व उर
दीण कर दिए ।

राजन २०-२१
इसके बाद
वपिध्वज पांडु पुत्र न
महाराज के पुत्रों को देखा
जा रण में खड़े हुए थे
और शस्त्र-संचालन-बला में
व अपना धनुष उठाकर
हृषीकेश से ऐसा बोल
अच्युत,
मरे रण का
दोना सेनापति व बीच कीजिए ।

दू तो उनका २२
जा सम्मुख युद्ध रामना से आए हैं
वीर तीन हैं
जो इस रण में
मुझसे लड़ने व लायक हैं

२३ जो इस रण मे
बुद्धिहीन दुर्योधन के जय कामो बन
लडने आए है
अच्युत,
मैं सबका देखूगा ।

२४-२५ गुडाकेश की विनती सुनकर
हृषीकेश न
उत्तम रथ को
लाकर दोना सेनाया के बीच
भीष्म औ द्रोण और सब नरपतियो के
सम्मुख रोक दिया
फिर बोले
'पाथ, वीरवा का दल देखो
जो कि यहा समवेत हुआ है ।

२६-२७ पथा पुत्र ने
लोनो सेनाओ म,
अपना पितामहा को
और पितव्या आचार्यों को,
मामा भ्राताओ को, पुत्रा औ पौत्रो को
श्वसुर, सुहृद, मित्रो को दस्ता ।

२७-२८ कुतो सुत ने
समर-भूमि म
सभी वधुआ को अव देखा,
उर म अतिशय करुणा जागी,
औ' विषाद से भारी मन से ऐसा बोले,

कण्ण
यहा पर समरो मुख स्वजना को पाकर
मेरा तन वपित हो रोमाचित हाता है,
जग शिथिल होते हैं
मुख मूखा जाता है ।

२८-२९

३०
मेह जली जाती,
मन ऐसा भ्रमित हो रहा
खडा नहीं मैं रह सकता हूँ
गाढीव को मरा हाथ सभाल न पाता ।

३१
हैं केशव
सब लक्षण भी विपरीत दीखत
रण म स्वजना का वध कर
बल्याण नहीं मैं देख रहा हूँ ।

कण्ण ३२
विजय मैं नहीं चाहता
औ न राज्य ही
और न सुख ही
ह गाविंद
राज्य भोगा स
जीवन स भा
नहा प्रयोजन कोर मुक्तको ।

जिन वारण ३३
राज्य, भाग औ सुख इच्छित है
व ही रण म

खड़े हुए हैं—

- ३४ गुरजन, दादे,
ताऊ चाचे मामे,
बटे पाते,
और ससुर औ साले
औ सारे मेर सत्रधी ।
- ३५ मधुसूदन
नलोक्य राज्य के लिए—
भूमि किस गिनती म है—
इह मारना नहीं चाहता
यदि ये मुषको मार तो भी ।
- ३६ क्या प्रसन्नता होगी
इन घतराष्ट्र मुता का मार
जनादन ?
वध कर भी
इन आततायिया का
हमको पाप ही लगगा ।
- ३७ इससे ह माघव
म्वयधु घतराष्ट्र-मुता को
हमे मारना नहीं चाहिए ।
फिर स्वजनो को मार
सुखी हम कस हागे ?

यद्यपि लोभापहत चित्त य ३८
नही देखते

दोष कुलक्षय का,
पातक भी मित्र द्रोह का

ता भा ३९
कुल-क्षय दोष जाननेवाले जा हम

क्या इस पातक स
हटन की बात न सोचें ?

कुल-क्षय स ४०
कुल धम सनातन मिट जाते हैं
और धम के मिट जान स

वर्ण
अधम समूचे कुल पर छा जाता है ।

जब अधम छा जाता है तब ४१
कुलस्त्रियाँ दूषित हो जाती,
औ' दूषित हो जान स व,

वर्ण
वर्णसंकर का जन्म लिया करती हैं ।

और वर्णसंकर ४२
कुल का, कुल घातन का भी
नरक लोक में पहुँचा दत्त,

पिंड और जल-यचिन
इनका पिनर लाग ना

गिर जान है

४३ कण्ण,
वणसकरकारी इन दोषो से
कुल घातक लोगो के
शाश्वत कुल जाति धम,
निश्चय, मिट जाते ।

४४ और जनादन,
हमने ऐसा सुन रक्खा है
जिन लोगो का
जाति धम कुल धम उठ गया
उहे नरक से कभी नहीं छुटकारा मिलता ।

४५ कण्ण शोक है
महापाप यह करने को जो
हम उद्यत हैं—
राज्य और सुख पाने को जो
म्बजनो का वध करने को तयार हुए हैं ।

४६ बिना शस्त्र औ बिना लडे मैं
अगर समर म
शस्त्रपाणि धतराष्ट सुतो से मारा जाता,
तो भी मेरे लिए क्षेमकर ।’

४७ ऐसा कहकर
धनुष-बाण तज,
रण-स्यदन के पष्ठ भाग मे
शोक विकल अजु न जा बठे ।

दूसरा अध्याय

करुणा विगलित, शोकाकुल १
अजु न की आखा का
माँसू से भरी देखकर
महाराज
मधुसूदन बाल

अजु न, २
इस विपमस्थल में तुम
क्या अज्ञानी बन बैठ हा ?—
यह न आयपय
यह न कीर्तिकर
यह न स्वर्गप्रद ।

पाथ ३
बलव्य को मत अपनाआ,
तुम्ह नही यह सामा दता
धुंध हृदय की दुबलता का त्याग
सह हा ।

अजु न बाल, ४

हे मधुसूदन,
 समर भूमि में
 भीष्म द्रोण पर बाण चलाकर
 किस प्रकार मैं युद्ध करूँगा।
 हे अरिसूदन,
 वे दोनों ही पूजनीय हैं।

५ गुरुजन महानुभावा की
 हत्या से बचकर
 मुझे लाक में
 भिक्षा पर भी जीना हो तो
 श्रेयस्कर है।
 गुरुआ का वध करके भी मैं
 रघुन से सने
 जय-काम के
 भोगों को ही तो भोगूँगा।

६ क्या करना
 है श्रेष्ठ हमारे लिए,
 हम यह ज्ञात नहीं है
 औ न यही
 हम जीतेगे या वे जीतेगे।
 क्या विडवना ! —
 जिन्ह मारकर
 हम जीना भी नहीं चाहते,
 आज उही घतराष्ट्र सुता को
 हम रण सम्मुख देख रहे हैं।

कायरता ७

मेरे स्वभाव में समा गई है
और स्वयं में सशय मुझको,
इसीलिए मैं पृथ्वी रहा हूँ
जो निश्चय श्रयस्कर हो
वह मुझ बताए
क्षिप्य आपका हूँ गिरागस्त,
पथ दिखलाए ।

भू पर ८

धन सपन, अकटक राज्य
स्वयं में
जमरा पर स्वामित्व
प्राप्त कर लने पर भी
यह उपाय मैं नही देखता
जिससे मेरे
इन्द्रिय गोप्य शोक दूर हो ।

दुष्टावस्था में ९

गुडामें एसा कहकर व
राजन् उनसे फिर या बोले
नही कन्ना युद्ध ।
और व मौन हो रहे ।

इसपर, भारत १०

हमन-जस
दुष्टावस्था में
दाना सनाया व बीच

दुखी अजु न से
वचन कहे ये—

११ शोक मनाना
उचित नहीं है जिनपर,
उनपर शोक मनाता है
प्रजावादी बनता है ।
जो पंडित है
मत्त मूर्खों पर शोक न करते ।

१२ और
न तो ऐसा ही है
मैं किसी बाल म न था
न था तू
या ये राजा लोग नहीं थे,
और न ऐसा ही है
हम सब इससे आगे नहीं रहेंगे ।

१३ जसे दही
देह धार
कीमार युवा बद्धावस्था का
अनुभव करता
वसे ही देहातर पाता ।
इसके कारण
धीर नहीं मोहित होते हैं ।

१४ वीन्तेय
सयोग

इंद्रियो औ' विषया के,
शीत उष्ण सुख दुःखद,
भगुर हैं, अनित्य है
इन्हें सहन कर ।

हे पुरुषपति, १५
सुख-दुःख एक समझने वाला
धीर पुरुष जो
इनसे व्यथित नहीं होता है
वह अमरत्व प्राप्त करता है ।

सत का ही अस्तित्व, १६
असत अस्तित्व रहित है,
इन दोनों का पूर्ण रूप से
तत्त्वदर्शिया ने देखा है ।

अविनाशी १७
तू उस जान,
जिससे यह सारा विश्व व्याप्त है,
उन अव्यय का
नाश नहीं काई कर सकता ।

नाश रहित, १८
निस्सीम,
नित्य देही के सन तन
अतवत ही कह गए हैं ।
समर न कर तू
अमर उन्हें कर नष्ट सनेगा ।

अजु न, फिर क्यों
समर न कर तू ।

- १६ इसे मानता है जो हता,
और इस जा हता समझता
व दाना हा नहीं जानते
यह न कभा हत हाता
जोर न हता बनता ।
- २० यह न कभी जन्मता न मरता,
होकर फिर स हाना
इसकी प्रकृति नहीं है
यह शाश्वत अज नित्य, पुरातन
तन हनन स
इसका हनन नहीं हाता है ।
- २१ पया-पुत्र
जो उसे
अजन्मा अव्यय नित्य तथा
अविनाशी जाना करता
कसे किसका हनन कराता
कस किसका हता बनता ?
- २२ जीण बसन
तजवर नर जसे
नए वस्त्र धारण करता है
जीण दह
तजवर वसे ही